अपने पुस्तक-विक्रेता से

माँगिए

कवि की अन्य रचनाएँ

व्याकुल-वीणा

मनोरम और करुण-भाव-पूर्ण गीतों

की

मधुमय सृष्टि

उपहार आठ आना मात्र

विश्वविद्यालय

पाश्चात्य शिक्षा की वीभत्स विडम्बना

के

मायाजाल

का

मर्मस्पर्शी काव्यमय चलचित्र

मूल्य केवल छः आना

किरणबाला

उदयभानु सिंह

प्रकाशक—उदयभानु सिंह
ग्राम—बैरी
डाकघर—सोहौली
जिला—आज़मगढ़

प्रथमावृत्ति—वसन्त पञ्चमी, सम्वत् २०००

उपहार—एक रुपया मात्र

मिलने का पता

१, क्लाइड रोड,
लखनऊ.

श्री मृत्युञ्जय रसशाला,
श्रीराम रोड,
लखनऊ.

मुद्रक
पंडित मन्नालाल तिवारी
शुक्ला प्रिंटिंग प्रेस, नज़ीराबाद,
लखनऊ.

श्रीमान् राजा
वीरेन्द्रशाह जू देव
जगम्मनपुर राज,
जालौन

पूजनीया राजमाता

श्रीमती बैशिनी जू देवी

जगम्मनपुर राज, जालौन

के

करारविन्दों

में

सादर समर्पित

कथासूत्र

'किरणबाला' सुमनों का एक हार है, जिसमें इतिहास के गुलाब और कथा-कहानी की मालती तथा सरोजिनी कल्पना के सूत्र में एक साथ पिरोई गई हैं।

कथा की शृङ्खला इस प्रकार मिलाई गई है :—

महाराणा प्रताप ने अकबर का आधिपत्य स्वीकार कर लिया। राणा का पत्र पाकर यवन सम्राट फूला न समाया। यह शोक-समाचार सुनकर पृथ्वीराज और किरणबाला को हार्दिक क्लेश हुआ। किरणबाला ने पृथ्वीराज से कहा, "आप महाराणा को कसकर पत्र लिखिए जिससे वे सग्राम से विमुख न हों। इधर मैं सज्जित होकर मीनाबाजार देखने के लिए जाऊँगी और भरे बाजार में अकबर को अपमानित कर उसकी कुत्सित क्रीडा सदा के लिए बन्द कराऊँगी।" ..

किरणबाला को मीनाबाजार में देखकर अकबर का हृदय-सागर लहरा उठा। किरण की प्रत्याशाओं के विरुद्ध एक आश्चर्यजनक घटना घट गई। अचानक वह एक कमरे मे बन्द हो गई, लाख प्रयत्न करने पर भी द्वार का पता न चला।....

कामी अकबर ने नारी के वेष मे एक गुप्त द्वार से उस कमरे में प्रवेश किया। किरणबाला उस यवनाधिप को पटककर छाती पर चढ़ बैठी और मारने के लिए कटार निकाली। अकबर की दीनतापूर्ण प्रार्थना पर उसे करुणा आ गई। वीराङ्गना ने उसे यथायाचित प्राणभिक्षा प्रदान की।

उसी दिन से अकबर ने मीनाबाजार बन्द करा दिया और महाराणा प्रताप से वैरभाव त्याग दिया।

भिन्न-भिन्न स्थलों पर इस क्षत्राणी के तीन नाम मिलते हैं—'किरण', 'किरणबाला' और 'चम्पा'। मुझे 'किरणबाला' नाम अधिक सुन्दर जँचा, अतएव मैंने इसे ही अपनाया है।

इस साधारण कथा-लोक से ऊपर उठकर एक साङ्केतिक अर्थ-जगत का भी दर्शन किया जा सकता है। उस नवीन भूमिका में अकबर पुरुषविशेष न रहकर, निसर्गतः नृशस हिंसक पौरुष और मानव की सहज पाप-प्रवर्तिनी दानव-प्रवृत्ति का प्रतीक है, और किरणबाला नारीविशेष न रहकर, कोमल सकरुण नारीत्व, मङ्गलमयी देवभावना तथा दानवता-सहारिणी अमोघ शक्ति की सजीवन मूर्ति।

विजया दशमी,
सं० २००० । — उदयभानु सिंह

[१]

जब वसुधाधर गुरुता तजकर
नभ मे उड़ने को धूल बना,
नन्दन कानन का पारिजात
अपना कर शूल बबूल बना,

एक

[२]

जब सागर ने सीमा खोकर
सरिता के घर जाना चाहा,
जब निर्विकार ने जीवन-सुख
लेने को मर जाना चाहा;

[३]

जब दिनकर ने जुगनू बन कर
रजनी का अङ्कशयन चाहा,
जब शङ्कर ने विह्वल होकर
देखा न कलङ्क मयन चाहा;

[४]

जब नरक-कुण्ड में देवों की
कीड़े बनने की साध हुई,
जब शैशव-सरिस अमायिकता
जगतीतल पर अपराध हुई;

[५]

जननी में हिंसक-वृत्ति जगी,
शिशु का शोणित पीना चाहा,
जब कालकूट पीकर भव के
प्राकृत जन ने जीना चाहा,

[६]

जब धर्मराज को ही बन्दी
करने पापी पविमान उठा,
स्वर्गङ्गा को खारी करने
जब अकबर का अभिमान उठा,

[७]

तब भुजा सुदर्शन की फरकी,
दानव तब अन्तर्धान हँसा;
सहसा तब काँप उठी धरती,
धरती-पति का अपमान हँसा॥

❀ ❀ ❀

[८]

भारत की भाँति अंशुमाली
गतगौरव होता जाता था ;
जागरण - क्लान्त प्रहरी वासर
सालस सुधि खोता जाता था ।

[९]

थे पृथ्वीराज विचार - मग्न
चिन्तित गौरव - गिरि से गिर कर ,
'हे नाथ ! विषण्णमना क्यों हो ?'—
यह प्रश्न सुना, बोले फिरकर—

[१०]

"क्या कहूँ प्रिये ! माया हरि की,
वाणी - पति वाणी - हीन हुआ,
ऊपर तारा टूटा नभ में,
भू पर सम्राट विलीन हुआ !

[११]

किसने सोचा था राहु-विकल
दिनकर का रथ रुक जाएगा ?
राणा प्रताप - सा अभिमानी
दुर्दिन पाकर झुक जाएगा ?

[१२]

मेवाडसिंह ने अकबर को
अपना अधीश स्वीकार किया,
मैंने उनकी पाती देखी,
छन भर कुछ सोच - विचार किया ;

[१३]

फिर दृढ़ होकर प्रतिवाद किया—
'मायामय विश्व कुचाली है,
राणा का लेख न हो सकता,
यह पत्र किसी का जाली है।'

[१४]

तदनन्तर जब आँखें फेरीं,
देखा नवरोज - वितान तना;
क्षत्रिय - कुमारियों, वधुओं की
बलिवेदी का सामान बना।

[१५]

आँखों से चिनगारी छिटकी,
फिर धधक उठी उर की ज्वाला;
सोचो, अब कौन उपाय करूँ ?"
बोली तत्काल किरणबाला—

[१६]

"अब चिन्तन का अवकाश नहीं,
अकबर का मद हरना होगा;
जीवन लेकर, देकर अथवा,
प्रतिकार हमें करना होगा।

[१७]

प्रियतम! अब नेक विलम्ब न हो,
भारत की सञ्चित धाक रहे,
राणा को पत्र लिखो कसकर—
'क्षत्रिय-कुल-पद्म-दिवाकर हे!

[१८]

भारत का लाज-जहाज पड़ा
प्रालेय-सिन्धु-लहरों में है;
केवल तुम, और न कर्णधार
इन सङ्कट के पहरों में है।

[१६]

जननी-स्वजाति की लाज रखो,
मन को इस भाँति न दीन करो;
प्रणवीर ! विजय चेरी होगी,
फिर से संग्राम नवीन करो।'

[२०]

मैं इधर स्वयं सज्जित होकर
नौरोज देखने जाऊँगी;
सारा बाजार लगा होगा,
उसको वह सीख सिखाऊँगी;

[२१]

चमकेगा तेज क्षत्रियों का,
अकबर का दीप मन्द होगा,
नारकी काम-क्रीड़ा का पथ
मीनाबाजार बन्द होगा।

[२२]

हे देव! अमङ्गल हो सकता,
सपने में भी मत ध्यान करो;
होने दो पन्थ अपाय - भरा;
केवल आदेश प्रदान करो।"

[२३]

"वह भारतवर्ष - विजेता है,
नर है, दुर्बल नारी हो तुम,
किस भाँति प्रिये! कह दूँ 'जाओ'?
बन्दी - तिय हो, हारी हो तुम।"

[२४]

"जीवनधन! तुम क्षत्रिय - नृसिंह,
वीरा हूँ, क्षत्राणी हूँ मै,
यह शङ्काओं की भूमि नहीं,
वह दैत्य, चक्रपाणी हूँ मैं।

[२५]

क्या सिंह - वधू जीवन रहते
जम्बुक की पद - चेरी होगी ?
जब कोई पन्थ नहीं होगा,
मेरी कटार मेरी होगी।

[२६]

आज्ञा दो, धर्म पुकार रहा,
हे नाथ! विलम्ब न हो जाए,
मेरे सतीत्व का फल, अवसर,
आया है आज, न खो जाए।"

[२७]

"जाओ सुख से मेरी रानी!
हेरम्ब तुम्हारा त्राण करे;
बाधा बन जाय सहायकरी,
जय हो, शङ्कर कल्याण करें।"

❀ ❀ ❀

[२८]

तुम भी मन में कहते होगे—
'हम क्षत्रिय हैं, अभिमानी है;
मेरी दहाड़ से ही पहाड़
फट जाते तुङ्ग हिमानी है।'

[२९]

लज्जा से सिर नीचा कर लो,
कहने में दम घुट जाता है,
किस भाँति हमारी बहनों का
सरबस बरबस लुट जाता है।

[३०]

यवनों के काम-हुताशन में
उनका जलता संसार लखो,
पाषाण कलेजे पर रखकर
चलकर मीनाबाज़ार लखो।

ॐ ॐ ॐ

[३१]

अलका का, अमरपुरी का भी
वैभव होता निस्सार लजा।
अनमोल मोतियों, लालों से
जगमग मीनाबाजार सजा।

[३२]

नन्हे - से आँगन में अनन्त
सौन्दर्य - सृष्टि विखरी पड़ती।
उन अलङ्कार के कामों पर
नर - शिल्प - कला निखरी पड़ती।

[३३]

कञ्चन - कर - किसलय में लेकर
अवदात रजत की मालाएँ,
पीयूप बरसती लसती थी
अभिराम विधूपम बालाएँ।

[३४]

जिनका प्रतिविम्व लिए मानिक
दुर्लभ फल का लम्भन करते;
अकवर के उद्दीपन बनकर,
परियों का परिरम्भन करते।

[३५]

जिनकी रचना के काल,
विधाता का साधन चुकते लखकर,
लज्जा - वश परम प्रजापति को
नीरजदल में लुकते लखकर—

[३६]

सुमनावलियों, लतिकाओं ने
मृदुता दी, सुरभि - निधान दिया,
खञ्जन - मृग - मीनों ने सहर्ष
लोचन - लालित्य प्रदान किया।

[३७]

कैशिक सश्रीकता, चञ्चलता
घनने, चमरी ने, व्यालों ने,
सुर - वधुओं ने तारुण्य नवल,
आरुण्य प्रवीन प्रवालों ने,

[३८]

सीपी ने मुक्तक - मालाएँ,
चञ्चुक - निधि तोतों ने दे दी;
कोकिल ने कोमल कण्ठ मधुर,
कलकान्ति कपोतों ने दे दी।

[३६]

निज गुण का सदुपयोग करके
इस भाँति सकल उपमानों ने,
अपना लघु जीवन धन्य किया,
कवि ने, छवि ने, छविमानों ने।

[४०]

मीनाबाजार - पींजरे की
मनुजों को ही क्रय कर लेतीं;
रसभरी सराग लालमुनियाँ
मुनियों का भी मन हर लेतीं।

[४१]

वधशाला में अजिकाओं - सी
मायिक चारे पर फूल रहीं।
यौवन - दोले में नाश लिए
बाजार - विटप पर झूल रहीं।

[४२]

अकबर सुषमासव पीता था
लेकर अवलम्ब झरोखे का;
बँध रही अधोगत गीध - दृष्टि
उपनयन लगाकर धोखे का।

[४३]

कान्ता - विशेष से क्षुब्ध - हृदय
निज कान्त - सिद्धि की आशा में,
देता आदेश कुटनियों को
अकबर इङ्गित की भाषा में।

[४४]

वे देकर मोल अनेक गुना
रमणी के भूषण ले लेतीं;
उसको बलात् वैतरणी में
मज्जित कर दूषण दे देती।

[४५]

हा ! कितनी करुण कहानी है !
पर सभ्य समाज निराला है।
तलवार शिष्टता की सिर पर,
अपनी वाणी पर ताला है।

❀ ❀ ❀

[४६]

अकबर को तीनों लोक मिला,
नव रङ्ग रङ्गशाला लाई :
रूपक की नवल नायिका-सी
जब आज किरणबाला आई।

[४७]

उर्वशी, मेनका, रम्भा को
करती पानी-पानी आई,
यौवन की मधु-प्याली में
रस छलकाती छवि-रानी आई।

[४८]

आदित्य - लोक की रजनी के
अम्बर में चन्द्रकला आई ;
अथवा, अपनी विभूति लखने
शृङ्गारमयी कमला आई ।

[४९]

कलधौत - कान्ति - परिधान - बीच
रमणी की मूर्ति निराली में,
अकलङ्क मयङ्क - बिम्ब लखकर
ऊषा की स्वर्णिम लाली में ;

[५०]

अकबर का बौना हृदय - सिन्धु
विक्षुब्ध, वासना का चेरा,
सप्तम - नभ - तल - शशि छूने को
लहराया अन्धकार - प्रेरा ।

❀ ❀ ❀

[५१]

घट गई असम्भावित घटना,
अति जटिल जाल ने फाँस लिया;
निज को अनाथ - बन्दी पाकर
बाला ने दीर्घ उसाँस लिया।

[५२]

घिर गई सिंहिनी घेरे में,
पर अद्भुत कारागार मिला;
आगे - पीछे, दाएँ - बाएँ
हेरा, पर हाय ! न द्वार मिला।

[५३]

कैसे, किस पथ होकर आई—
उसको यह नेक न ज्ञात हुआ;
वह काम - चित्र - चित्रित प्रकोष्ठ
तमकारा - सा प्रतिभात हुआ

[५४]

हा! अपने ही गौरव - तरु पर,
अपने कर भूल कुठार उठा!
जब विक्रम - पन्थ न दीख पड़ा,
तब मन में दीन विचार उठा—

[५५]

"अब चेतनता की चाह नहीं,
जगदीश! जगत से ऊब गई;
बचने की कोई राह नहीं,
हा नाथ! आज मैं डूब गई!'

[५६]

यदि अन्त समय कुछ कह न सकी,
जीवन - प्रवाह में बह न सकी,
क्षत्राणी का व्रत धारणकर,
समझो, अवतारण सह न सकी।

[५७]

'नारी! तुम कोमलतम विभूति'—
वरदान तुम्हारा शाप हरे!
जो चाहे मनमानी कर ले,
नारी होना भी पाप अरे!

[५८]

हे गढ़ दुर्जय! रजकण बनकर
नारी की करुण कथा कहना;
पाषाणखण्ड! निर्झर बनकर
नारी की मूक व्यथा कहना।

[५६]

हे वसुधाधर ! प्रतिध्वनि बनकर
नारी की दलित प्रथा कहना ;
हे व्योम ! धूमधारा बनकर
नारी की हाय तथा कहना।

[६०]

दिग्बालाओ ! रोना न कहीं,
अधिकार मिला खोना न कहीं ;
नारी के स्निग्ध धरातल पर
अपमान - गरल बोना न कहीं।

[६१]

नारी का रूप निखर पड़ता,
नर का बढ़ता अधिकार नहीं ;
नर निर्मोही विजयी बन ले,
पर यह नारी की हार नहीं।"

[६२]

वह विकल विश्व - बन्धन में थी,
धीरज का वन्धन छूट पड़ा;
कातरतम मन झंकृत होकर
भावों के नद में फूट - पड़ा—

[६३]

"जब से नर को चेतना मिली,
जब से यह सृष्टि - विधान बना;
नारी को भारभरी गुनकर
नर पामर - कलुषनिधान बना।

[६४]

कामातिचार पीड़ित मनु के
मन में पिशाच - संग्राम मचा;
करुणाकर का इङ्गित पाकर
देवों ने दण्ड - विधान रचा।

[६५]

वैवस्वत के नैतिक' क्षय से
सविता सशोक दहता रहता;
नारी के प्रेम - पयोधर से
पीयूष - स्रोत वहता रहता।

[६६]

नारी निरीह कोमलता की,
करुणा की पावन मूर्ति बनी;
मानव - कवि की जीवन - कविता
की सरस समस्यापूर्ति बनी।

[६७]

छलिया नर हेम - कुरङ्ग बना,
जड़तावश पाप - तुरङ्ग बना;
सुख से नर - जाति जिसे तरती,
भवसागर - बीच सुरङ्ग बना।

[६८]

नारी के दो आँसू-कन में
वह महाप्रलय - ज्वाला निकली,
शम्पाओं की सेना - समेत
पुष्करावर्त - माला निकली—

[६९]

रावण - से विश्व - विजेता का
सोने का लोक वहा डाला;
सुर - असुर - चराचर - जेता का
पल भर में मान वहा डाला।

[७०]

नर ने जब अग्नि परीक्षा ली,
नारी का गौरव निखर पड़ा;
देवी को कानन - वास मिला,
धरती पर रौरव विखर पड़ा।

[७१]

उस दिन अरण्य - रोदन सुनकर
नरराज - वञ्चिता नारी का
भू माँ ने करुणाञ्चल पसार
रख लिया मान बेचारी का।

[७२]

हे राम ! कहीं सीता होती !
धरती की छाती फट जाती ;
मैं तुरत समा जाती उसमें ,
यह क्लेश - निगड़ तब कट जाती !

[७३]

उस दिन कौरव की भरी सभा ,
जब पाप - वृत्ति थी अड़ी हुई,
धरती में धँसती जाती थी
नारी लज्जा में गड़ी हुई।

[७४]

अबला की लाज रखा तुमने,
वह निस्सहाय निरुपाया थी;
नारी का अञ्चल हट न सका,
भगवान ! तुम्हारी माया थी।

[७५]

वह भारत का संग्राम कहाँ?
हठधर्म भयङ्कर सपना था,
वह पाप पुण्य का माप न था
फिर भी दुर्योधन अपना था।

[७६]

इन म्लेछ वृजिन कृमि कीटों के
निर्मम हाथों से घिसी गई,
व्यभिचार - शिला पर बार बार
नारी बेचारी पिसी गई।

[७७]

उनका अभिराम सुहाग विन्दु !
रतियों के मोहन गान कहाँ !
दानवता के पग चूम रहा,
भारत ! तेरा अभिमान कहाँ ?

[७८]

कोमलतम कञ्ज - पुतलियों का
हा ! कितना वज्र कलेजा था !
क्या इसीलिए जगदीश ! उन्हे
इस नरक - भूमि पर भेजा था ?

[७९]

जलने को ज्वाला मिल न सकी,
सदया को पाला मार गया ;
गलने को हिम मिलता कैसे ?
गलकर अपनापन हार गया ।

[८०]

वन ग्राह - समान महोदधि भी
कमला - तन को अपना न सका,
भवसागर - पीर - डुबे जन को
भव - सागर - नीर डुबा न सका।

[८१]

सारा पत - पानी उतर गया,
असमर्थ रही वह मरने में।
करुणेश, बिलम्ब आज क्यों है
नारी का संकट हरने में?

[८२]

नारी के मंगलदेव हरे!
वर दो, उर से वह आह उठे,
दे अखिल सृष्टि के प्राण चीर,
सारा ब्रह्माण्ड कराह उठे।

[८३]

आबाल - वृद्ध - वनिताजन में,
मुझमें जीवट असीम भर दो;
दुश्शासन का मिट जाय नाम,
भारतभर वज्र भीम भर दो।"

❀ ❀ ❀

[८४]

थी किरण तोलती बल अपना
लेकर कर में प्रतिकार-तुला;
कानों ने शब्द सुना कोई,
तदनन्तर अन्तर्द्वार खुला।

[८५]

पहले तो विस्मित वीरा ने
मन में ऐसा अनुमान किया,
गढ़-भित्ति- राहु ने उसको ही
ग्रसने को मुख-व्यादान किया;

[८६]

पर सहसा जन - पगध्वनि आई,
फिर एक छटा न्यारी देखी;
जिसमें लावण्य न लोच न था,
सङ्कोच - रहित नारी देखी।

[८७]

कुछ भक्ष्य प्राप्त कर लेने पर
अति क्षुधित नक्र - सम धारा में,
अकबर ने छद्म - प्रवेश किया
उस कठिन कलङ्कित कारा में।

[८८]

अविलम्ब सिंहिनी ने निश्चय
कर लिया कि क्या करना होगा;
यदि हो न सका प्रण का पालन,
जीना अथवा मरना होगा।

[८९]

क्षत्राणी का अभिमान जगा
ब्रह्माण्ड हिलाती - सी बोली,
दारुण रव से आकाश और
पाताल मिलाती - सी बोली—

[९०]

"धरती! तू थाम हृदय अपना,
वह नूतन परिवर्तन होगा,
जिसके प्रस्तावन - सा प्रतीत
हर का ताण्डव नर्तन होगा।

[९१]

हे वरुण देव! शीतल तन में
यह नारी की ज्वाला रख लो,
नरता न भस्म हो जाय कहीं,
नर की जीवनशाला रख लो।

[६२]

कोमलते ! निर्ममता बन जा
करुणे ! कठोर शमता बन जा,
नारीत्व ! नारि के अञ्चलधन !
नरसिंहों की क्षमता बन जा।"

[६३]

सनसनी वायु में फैल गई
नरपति होकर अतिचार किया,
पत्थर थर-थर-थर काँप उठे,
यमुना ने हाहाकार किया।

[६४]

वेदी की ओर त्रिवेणीमय
वेणी का लहराया पानी;
मणि-वञ्चक जन पर टूट रहा
मानों पवनाशन-सेनानी !

[६५]

चपला - सी चम्म हुई सहसा,
छल्ले की छम्म हुई सहसा,
अकबर के सबल उरस्थल पर
घुटनों की घम्म हुई सहसा।

[६६]

अकबर का मदमोचन बनकर,
सतियों का सत् - रोचन बनकर,
बिन्दी ललाट पर लाल लसी
शिव का तृतीय लोचन बनकर।

[६७]

मधुमय रसाल विष - साल बने,
कोमल जीवन - घन काल बने,
प्रलयङ्कर ज्वाल - कुमारक - से
वे सरस कपोल कराल बने।

[९८]

अपनी यह हीन-दशा लखकर
अकबर ने करुण विषाद किया;
कातर मन को व्याकुल करती
दुर्गा ने भैरव-नाद किया—

[९९]

"सतियों को विचल न कर सकती
संसार-विजयिनी रणभेरी;
उनकी तो धर्म-परीक्षा है,
इस पाप कसौटी पर तेरी।"

[१००]

कितना निष्ठुर विधि का विधान!
कितनी कठोरतम काल-कशा!
तन में विद्युत्तरङ्ग फिरती
लखकर अकबर की दीन दशा।

[१०१]

जो भ्रुएँ कभी समराङ्गण में
खिंच गई काल की रेखा - सी,
जँच रही नृशंस विधाता के
उलटे विधान के लेखा - सी।

[१०२]

भट सृष्टि - प्रलय अनुभव करते
जिसकी भृकुटी मोंती पर हों;
यह परीभाव - सीमा उसकी,
अबला के पद छाती पर हों।

[१०३]

यों तो परिवर्तनशील जगत
नित नई कथा कह जाता है;
पर प्रभु की यह लीला लखकर
भव भौंचका रह जाता है।

❀ ❀ ❀
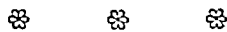
[१०४]

हे नर - जीवन के काम अमर !
तेरी मोहन मधुशाला है;
दम का गिरिराज - समाज डुबा
लेता रति का लघु प्याला है।

[१०५]

तेरा शर - चाप उठा जिस पर
उसकी मति भ्रष्ट हुई सहसा;
चिरसञ्चित पुण्य - पराक्रम की
अचला निधि नष्ट हुई सहसा।

[१०६]

जाने क्या आग भरी तेरी
यौवनमाँती मधुबाला में;
मानव - पतङ्ग जलता रहता
वासना - राग की ज्वाला में।

[१०७]

क्षणदा के साथ नवोढ़ा - सी
नव जीवन मधुशाला लाई,
बन - ठन कर मधुपायी आया,
सज - धज कर मधुबाला आई।

[१०८]

कल्पित आनन्द - जगत का वह
राजा था, यह महरानी थी,
गजराज बनी झुक - झूम रही
विह्वल मद-मस्त जवानी थी।

[१०९]

पर प्रात काल लखा सबने
मधुशाला का वह रङ्ग न था;
थे चूर चपक, मधुकलश सभी,
मधुबाला का अभिपङ्ग न था।

[११०]

यम के करालतम पाश बँधा
कङ्काल पिछड़ता था कोई;
गल-गल कर गिरते थे अवयव,
उठता, गिर पड़ता था कोई।

[१११]

पिञ्जूप - दूषिका - नासामल-
प्रस्राव - पुरीष - प्रवाहों में
बहता था, सड़ता था कोई
नरकाधि बसाकर आहों में।

[११२]

प्रलयङ्कर दृश्य देखकर भी यह
अन्धा लोक न चेत सका,
दर्शन की सृष्टि निरर्थ गई,
नर त्याग न मोह-निकेत सका।

`[११३]

कामी का सहज पतन देखो,
नारी का चरण-प्रहार सहा,
मानवता की तरणी बोरी,
सारा अपमान विसार कहा—

[११४]

"एकातपत्र भिक्षुक होंगे।
तुम कहीं राजरानी होगी।
अबला-भ्रुकुटी में वल विलोक
वसुधा पानी-पानी होगी।"

[११५]

सुनकर प्रस्ताव विवेक - हीन
वीभत्स महा पाखण्डी का,
अकबर को जड़ीभूत करता
स्वर गूँज उठा रणचण्डी का—

[११६]

"अबला क्या, व्यभिचारी क्या है,
सम्राट छत्रधारी क्या है,
रे पाप! तुझे बतलाती हूँ,
हिन्दू की पत नारी क्या है।

[११७]

पीयूष - प्रसार लिए चलती,
रस - पारावार लिए चलती,
इन रङ्ग - रँगीली भौंहों में
यम का संसार लिए चलती।

[११८]

चलती नव शिशु का हास लिए,
बन्दी भ्रमरी का लास लिए,
चलती मरते - जीते जग का
रोता - हँसता इतिहास लिए।

[११६]

अविकल नारी के तरल नयन,
बस दृष्टि - कोण का भेद हुआ,
कुछ ने तो नव जीवन पाया,
कुछ की छाती में छेद हुआ।

[१२०]

कितने काँटे बन गए सुमन,
कितने मसान कैलाश बने;
कितने मरु - देश बने मधुबन,
कितने तमतोम प्रकाश बने।

[१२१]

कितनों की आँखे गई फूट
कितने कोमल उर क्रूर हुए;
टकराकर काम - धराधर से
कितने नर चकनाचूर हुए।

[१२२]

नीरजा दीप से खिली नहीं,
सीता रावण से हिली नहीं,
सागर - मन्थन तक कर डाला,
कमला दनुजों को मिली नहीं।"

[१२३]

"मानव के भाव - भरे जग में
अवगुण्ठन लेकर आती है,
नर की व्याकुलता में नारी
आनन्द अलौकिक पाती है।

[१२४]

"नर ने संसार लुटा डाला,
नारी फिर भी भूखी रहती;
आसर्ग - प्रलय बरसे बादल,
रस - हीन शिला सूखी रहती।"

[१२५]

"नर ने संसार लुटा डाला,
किस लिए बता रे अभिमानी?
जिससे बलात्कारी न खले,
बक बना प्रेम - पूजक, दानी।

[१२६]

रे पुरुष - जाति के पाप - रूप!
तू ने प्रशस्त पथ छोड़ दिया;
वरदान सकल देनेवाली
गति से तूने मुँह मोड़ लिया।

[१२७]

ध्वनि - क्षेपक यन्त्र हृदय नर का,
(नभ में तरङ्ग की सृष्टि लगी,)
अपने को लय करनेवाली
नारी में सञ्जय - दृष्टि लगी।

[१२८]

नर की जब करुण पुकार सुनी
धाई नयनों में नीर लिए;
अल्हड़पन में पागल जग ने
समझा सम्मोहन - तीर लिए।

[१२९]

नर को सर्वस्व प्रदान किया,
बन गई अकिञ्चन की दानी;
नारी दोनों की संसृति की,
रौरव की, नन्दन की रानी।

[१३०]

जब आकुल अन्तर में नर के
देवासुर - द्वन्द्व मचा करता,
नारी का सहज पुनीत हृदय
मङ्गल - उपदेश रचा करता।

[१३१]

मुरझाए फूल खिला देती,
वसुधा को सुधा पिला देती;
पर विनिमय में लेती न मोल,
माया हो ब्रह्म मिला देती।

[१३२]

नर ने बलिदानों पर पानी
फेरा, दानव - सा मुँह खोला;
वरदानमयी प्रतिमा हँसती
सुख से।" दुख से अकबर बोला—

[१३३]

"दर्शन की संसृति से विभिन्न
यह भौतिक भूमि - प्रणाली है;
जग इस छन गीतामति योगी,
उस छन भोगी वनमाली है।

[१३४]

उस दिन विहार की वेला थी,
आनन्द - निकेत - वाटिका में
लतिका - द्रुम - सुमन - कोरकों की
रसमय अभिराम नाटिका में—

[१३५]

वल्लरियाँ थीं तरु - अङ्क - बँधी,
मधुमास - मदन थे झूम रहे;
पश्चिम का मत्त समीरण था,
अलि थे कलिका - मुख चूम रहे।

[१३६]

उस रङ्ग - भूमिका में तुम थीं,
कर में प्रसून का दोना था,
मैं जान नहीं पाया अब तक,
तुममें क्या जादू - टोना था!

[१३७]

कुन्तल - तरङ्ग मुखमण्डल की,
सीमा पर घिर घनमाला - से,
रस बरसाते जिससे हिमांशु
गल जाय न भूतल - ज्वाला से।

[१३८]

रति की अनङ्ग - पाती लिखती,
रेखा कपोल - पाली में थी,
अनुरक्ति निमन्त्रित - सी करती
अधरों की मृदु लाली में थी।

[१३९]

ललना - लावण्य - विशिख ताने ;
कुसुमायुध ने आकर घेरा ;
नर की स्वाभाविक निर्बलता ,
मेरा मन मुग्ध बना चेरा ।

[१४०]

जगती की मान - ज्ञान - गठरी
लीलया काम हर लेता है ;
माया का कठपुतला पागल
कहने को यह कह देता है—

[१४१]

मेरे ही शर लेकर मेरा मन
जीत सकेगा मार नहीं ,
कुच - कलश कामिनी का मेरा
कर सकता है शृंगार नहीं ।

[१४२]

पर, मैंने निज आँखों देखा,
इस भाँति दाप करने वाले,
दस - बीस नहीं लाखों देखा,
कोरा प्रलाप करने वाले—

[१४३]

कामिनियों के कुच - शृंगों पर
सोपान लगा कर चढ़ते थे,
ठोकर खाकर गिर पड़ते थे,
साहस सँभाल फिर बढ़ते थे।

[१४४]

थे थूक - थूक कर चाट रहे
छिति के जघन्यतम कोने को,
थे माँग रहे मदिरा पीकर
खारा पानी मुँह धोने को।

[१४५]

सुन्दरता की खनि रमा, मेनका,
विश्व मोहिनी वाला में
रूपांश तुम्हारा था केवल,
जिनकी छवि की खर ज्वाला में—

[१४६]

जल गई संयमन की झोली
हरि की, ऋषि की, मुनि - योगी की;
मायापुर में फिर कौन कथा
मेरी, नर की, रसभोगी की?"

[१४७]

अकबर ने सत्य कथन करके
समझा कि तर्क से दाव दिया;
पर, प्रत्युत्पन्नमतित्व अहो!
कितना मुँहतोड़ जवाब दिया—

[१४८]

"तेरा ही बाप हुमायूँ था,
ऋषि थो न, उपेन्द्र न योगी था,
माया का देश यही जग था,
वह भी नर था, रसभोगी था,

[१४९]

थीं राजपूत - वनिताएँ भी
प्रतिमूर्ति पद्मिनी रानी की,
सरसाती थीं जग को सरिता
जिनकी लावण्य - कहानी की।

[१५०]

उसने भी बार अनेक सुनी
कुल - कामिनियों की रूप कथा;
लेकिन भाईपन की कितनी
गुरु, पावन, और अनूप कथा।

[१५१]

—रवि शेरशाह - सा दिन भर के
जीवन - सङ्गर में हार गया;
फिर शक्ति नई सञ्चित करने
अस्ताचल के उस पार गया।

[१५२]

रण - लोहित से रँगकर अम्बर
जब चली गई सन्ध्या - वामा;
जगतीतल को ढँकती आई
श्यामल मायापट से यामा।

[१५३]

शिविरस्थ हुमायूँ सोच रहा—
'बस एक समर करना होगा,
बंगाल विजय कर लेने पर
फिर राज्य अमर करना होगा।

[१५४]

अनवरत भीम संग्रामों का
दुर्लभ फल आने वाला है,
अफगानों का जीवन - प्रदीप
सम्प्रति बुझ - जाने वाला है।

[१५५]

गुजरात देश का सिंहासन
मिट्टी का एक खिलौना है,
वह शाह बहादुर तो केवल
इस सिंहों का मृगछौना है।'

[१५६]

तत्काल यथानिर्दिष्ट दूत
आया, 'जय हो, भुवनेश!' कहा;
फिर कर्मवती की राखी का
उपहार दिया, सन्देश कहा।

[१५७]

वह कितनी कठिन परीक्षा थी—
सपनों का सुख - संसार खड़ा
था एक ओर, दूसरी ओर
हिन्दू भगिनी का - प्यार खड़ा!

[१५८]

आदेश वहन का स्नेहमयी
सिर - आँखों पर धारण करके,
कर दिया कूच, सामन्त सभी
थक गए उसे वारण करके;

[१५९]

नृप ने अपने जय - जीवन का,
तन - धन का तनिक न ध्यान किया;
बस एक बहन की राखी का
सब कुछ खोकर सम्मान किया।

[१६०]

रे पतित ! आज भी भावकजन
सादर जिसका गुण गाते हैं,
सुधि - डोर लिए मानस - तल से
लोचन पानी भर लाते हैं।

[१६१]

नरता के साँचे ढला हुआ
साहित्य - उपासक चला गया,
तज्जनित कालिमा तू अकबर !
जो दीपक बाबर जला गया !

[१६२]

जीवन में छनिक सुवास मिला,
तू फूल गया रे फूल गया,
अपने को पापी पतित प्राण !
तू भूल गया रे भूल गया !

[१६३]

शिशु के पग डगमग करते थे,
गिर गिर कर फिर डग भरते थे।
तू निस्सहाय परदेसी था,
आँखों से निर्झर झरते थे।

[१६४]

दुर्भाग्य - भूमि का गेह बना,
सविषाद दैन्य की देह बना,
ताण्डवकारी अकरुण विधि में
पद - दलित निरादृत स्नेह बना।

[१६५]

कोई गति बाप न माँ की थी,
तू नचता था, विधि बाँकी थी;
वह कलापूर्ण अवनीतल की
कितनी सुन्दरतम झाँकी थी।

[१६६]

शैशव से यौवन - भार मिला,
आशा का कोमल प्यार मिला;
कुछ स्वाद मिला सुख - वैभव का
श्रद्धा से बुद्धि - विकार मिला।

[१६७]

जब चिन्ताओं का पार मिला,
अभिलाषा का संसार मिला,
तब विश्व - विजय की नीति जगी,
जब थोड़ा सा अधिकार मिला।

[१६८]

जो प्रथम प्रहर में जीवन के
महिमा - पद का इतिहास बनी,
मध्याह्न - समय भ्रम में पड़कर
तेरी वह नीति विलास बनी।

[१६६]

पहले विवाह - प्रस्ताव हुए,
कुछ धर्म बेचकर राव हुए,
तब भारत में नौरोज लगा,
जब विफल अनेकों दाव हुए।

[१७०]

ज्यों ज्यों मानव सोपान
विश्व - वैभव के चढ़ता जाता है;
त्यों त्यों दिनान्त - छाया - सा मन
मायावश बढ़ता जाता है।

[१७१]

पर, मूढ़ महा रजनी के कर
छाया का नाश न पढ़ सकता
होती है शेष कथा तेरी,
अब तू न कुपथ पर बढ़ सकता।"

❀ ❀ ❀

[१७२]

जो कुछ पहले मदमाती थी,
कामुकता के रंग लाती थी;
अक्सर की झिलमिलाति भ्रान्ति
धीरे धीरे पछताती थी।

[१७३]

उस रूप वाला ने
आदम की काया
नश्वर अब
नष्ट मिली

[१७४]

"जिसने प्रताप - सा वीर दिया,
भारत को स्वर्ण - शरीर दिया,
तेरी कादम्बिनि - सेना को
जिसने विद्युत् - सा चीर दिया।

[१७५]

जिस वीर - केसरी के मन में
वैभव की भूति विषाद बनी,
कङ्कड़ - पत्थर - कुश - कण्टक - मय
जन-हीन उटज प्रासाद बनी।

[१७६]

जन का कल्याण लिए फिरता,
जननी का त्राण लिए फिरता,
देवी स्वतन्त्रता के हित जो
करतल पर प्राण लिए फिरता।

[१७७]

वक्षस्थल पर पविपात हुए
पर कभी न मुँह से 'आह' कही;
बच्चों का रोदन सह न सका,
आँसू की धार अथाह बही,

[१७८]

उस दिन करुणा भी रोई थी
राणा - करुणाकर दोनों पर,
लख हृदय पिघल कर जमता-सा
नयनों के शीतल कोनों पर।

[१७९]

हेमन्त - अंत में ज्यों किरण
सम्भूत नवजीवन होती है;
रागिनि - गुलाल की पिचकारी
वैसी कटार विष - घोली है।"

[१८०]

कटिबन्धन को कम्पित पाकर
कटिकिङ्किनि भी छमछमा उठी ;
शोणित - प्यासी सित फणिनी - सी
पैनी कटार चमचमा उठी ।

[१८१]

कर गए देवता कूच, कुटिल
जीवन का पथ-सा नॉप उठा ;
अति प्रबल प्रभञ्जन - झंझा से
अकबर सरपत - सा कॉप उठा ।

[१८२]

भयजात भावनाओं के वन में
अन्ध पथिक - सा भटक रहा ;
उसका कलुषित मायिकतम मन
सन्देह - जाल में अटक रहा—

[१८३]

'रवि-द्युति-निधि लेकर रक्त-रंजित
क्या क्रूर काल-रेखा आई?
जगती पर उल्कापात लिए
या बालचन्द्र-लेखा आई?

[१८४]

अथवा, विद्युत की कौंध सकल
लघु वृत्तखण्ड में फूट पड़ी?
या प्रभा स्वयं हँसिया बनकर
मेरे प्राणों पर टूट पड़ी?

[१८५]

जो नवीरूप मायामय-सी
माया से अपने मौन रही,
चिर-सज्ञान चेतनता मेरी
मेरे अङ्गों में लीन रही।

[१८६]

या ज्वालामुखियों का समाज,
, जो ताप - दाप से अकड़ रहा,
लघु व्याल बनाकर रवि उसको
एकीकृत कर से जकड़ रहा?

[१८७]

अथवा अनलालय मे दहते
विकराल चक्र का चाप लिए,
वह ज्योतिरूप अविकार ब्रह्म
आया समस्त अभिशाप लिए?'

[१६०]

मुनियों को, मन-जेतारों को,
शङ्कर शिक्षा देने वाली,
किङ्कर जग को कल्याणमयी
कञ्चन - भिक्षा देने वाली;

[१६१]

जिनमें पावन धारा वहती
सुर - सरिता - तरनितनूजा की,
जिनकी ऋषियों नर - देवों ने
मन - वचन - कर्म से पूजा की,

[१६२]

जिनका विधि ने, हरि ने, हर ने
सम्मान किया, गुणगान किया,
तू ने उनका सर्वस्व हरा,
तू ने उनका अपमान किया।

[१६३]

भोली ललनाएँ छली गईं,
इस पाप - चक्र में दली गईं;
आँसुओं रक्त के रो रोकर
असहाय देवियाँ चली गईं।

[१६४]

जलती छाती की दाहों में,
वर्जनकारी नत बाहों में,
तूने क्रीड़ारस हेरा था,
हत! अबलाओं की आहों में।

[१६५]

सरसिज - सीपी में सिन्धु - दहन,
लिपटा भीगा अञ्चल देखा;
पानी जल जाने पर सूखे
नयनों में बड़वानल देखा।

[१६६]

कातर क्रन्दन तूने देखा,
निज पद-चन्दन तूने देखा;
साँसों में मौन वेदना से
जलता नन्दन तूने देखा।

[१६७]

अब अपर दृश्य का सार देख,
रणचण्डी का अवतार देख;
अपने शोणित की चिर प्यासी
मेरी कटार की धार देख!

[१६८]

मेरी प्यारी बाँकी कटार!
रख लाज आज माँ की कटार!
प्रतिकार - अनल - वाले! बन जा
वह महाकाल - झाँकी कटार!

[१९९]

अकबर के उर में कर प्रवेश
मेरी कटार ! मेरी कटार !
मेरे प्राणों की चिर सङ्गिनि !
मेरी कटार ! मेरी कटार !"

[२००]

गौरव का रूप विराट अरे !
जग - नृप - समाज - विभ्राट अरे !
अबला से प्राण - भीख माँगे
वह भारत का सम्राट अरे !—

[२०१]

"जो कुछ धन है, अथवा जो कुछ
उपलभ्य सकल उपकरणों में,
हे देवि ! समर्पित है सादर
तन - मन - जन सब तव चरणों में।

[२०२]

भर्त्सना चरम पर पहुँच गई,
अब मङ्गल का वरदान मिले;
तेरे पद - पद्म - पराग - लसित
इस जन को जीवन - दान मिले।

[२०३]

यौवन के ज्वार - प्रवाहों में
वह जाती जग की ज्ञान - कथा;
भाटे में कसक शेष रहती
कुछ मधुर निरापद मूक व्यथा।

[२०४]

जन पापों से अभिभूत हुआ,
यदि नहीं प्रेम से पूत हुआ,
मानव होकर भी नर - पिशाच
तब प्रेत हुआ, तब भूत हुआ।

[२०५]

ठोकर खाकर तब ज्ञान हुआ,
कर्तव्य-मार्ग का ध्यान हुआ;
होगी न चूक मुझमे ऐसी,
अब पाप-पुण्य का भान हुआ।"

[२०६]

"भयभीत स्वप्न में भग न सका,
जग कर सोता जन जग न सका।
यह सब प्रवञ्चना, छलना है;
फणियों पर चन्दन लग न सका।'

[२०७]

"टूटा वह स्वप्न सुरालय का,
सब कलुष-कलङ्क सुदूर हुआ;
अब सच्चा प्रेम-पुजारी हूँ,
मेरा सारा मद चूर हुआ।"

[२०८]

"यदि मैं तेरा मद तोड़ सकी,
तुझको कुपन्थ से मोड़ सकी,
कर सफल प्रतिज्ञा राणा की
जननी की पावन क्रोड़ सकी।

[२०९]

मानवता का सम्मान करे,
मानव का मञ्जुल वृत्त यही,
नारी की सेवा का व्रत ले।
पापों का प्रायश्चित्त यही।

[२१०]

इतना चित से उतरे न कहीं,
मरु, ग्राम, नगर, घर, जङ्गल हो,
जा, प्रान-दान देती हूँ मैं,
तू जहाँ रहे, तव मङ्गल हो।"

✿ ✿ ✿

[२११]

आसन हिल गया विधाता का,
तू धन्य धरा पर क्षत्राणी।
सन्देश सुना आई जग को
आकाशतरङ्ग — व्योमवाणी।

[२१२]

हर्षित मलयानिल - धाराएँ,
अग - जग को सरसाती आईं,
सुरबालाएँ सुमनावलियाँ
अम्बर से बरसाती आईं।

[२१३]

भीषण प्रहार से क्लान्त चरण
धोने को नवजीवन - दानी
गढ़ के बाहर लहराता था
कालिन्दी का निर्मल पानी।

[२१४]

प्रत्येक तनूरुह श्रम खोकर
गतभार धरा का हर्षाया;
रतिरानी को पलकों पर निज
पति के चरणों तक पहुँचाया।

[२१५]

पूरा तप, पतन - समाधि मिली
रावण - कौरव - से कामी को;
गिरिजा - सीता - श्यामा - समान
पा गई किरण निज स्वामी को।

❀ ❀ ❀

[२१६]

अकबर पर भी दो शब्द कथन
कुछ असमीचीन नहीं होगा,
सोती जगती ने सोचा था—
मद - मद्यप दीन नहीं होगा।

[२१७]

विषराज हलाहल ने सहसा
सरसामृत बरसाना सीखा;
दावानल - बाड़व ने वन को,
वननिधि को सरसाना सीखा।

[२१८]

अघ-आलय तीर्थ बना पावन,
पवि-पातक मेघ सुमन लाया;
ग्रीषम - सा तन - दाहक कुकाल
मधुमास अचानक बन आया।

[२१९]

पश्चात्ताप - गङ्गा मे धुल
अकबर का दिव्य स्वरूप हुआ;
राक्षसी वृत्ति तजकर दानव
देवोपम सच्चा भूप हुआ।

[२२०]

"मेरी चिरसङ्गिनि नीति, विदा!
रे काम - वासना - प्रीति, विदा!"
कहता था अन्तरतम उसका—
'मेरी छलछन्द - प्रतीति, विदा!'

[२२१]

हे सम्राटों के दाप, विदा !
दुर्जेय शिलीमुख - चाप, विदा !
जीवन के काम - प्रताप, विदा !
मेरे पापों के पाप, विदा !

[२२२]

मेरे मानस को आज ग्लानि-
लज्जा से तू भर देता है,
मेरा विजयी का स्वाँग व्यर्थ,
राणाप्रताप ! तू जेता है।

[२२३]

देवों का - सा नन्दन कानन
तेरे निवास का जङ्गल हो;
जा, वैरभाव तजता हूँ मैं,
तू जहाँ रहे, तव मङ्गल हो।"

[२२४]

नारी - सेवा का भार लिए
ऊँचता था वह गौरवशाली;
उसका अनुराग - बिम्ब लेकर
हँसती थी सन्ध्या की लाली।

[२२५]

आरती सतीजन की करने
वह तुङ्ग सौध की ओर चला;
नभ थार आरती का लेकर
सेवा में प्रेम - विभोर चला।

❀ ❀ ❀
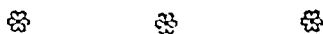
[२२६]

जिसको हम कह सकते मानव,
जो देश - जाति - अभिमानी था;
जिसमें कुछ भी भावुकता थी,
जिसमें वीरों का पानी था,

[२२७]

उसने यह सरस - कथा सुनकर
अपने को कुछ ऊपर पाया,
स्वर गूँज उठा सव कानों में,
आकाश वना, ' भूपर छाया—

[२२८]

जब तक पयोधि में पानी है,
कवियों में अक्षर - वानी है;
तब तक इस वीरवधू की भी
धरती पर अमर कहानी है॥

विवृति

१-४—अकबर वसुधाधर, पारिजात, सागर, ईश्वर, दिनकर, शङ्कर, देव और जननी की भाँति महान था, परन्तु अपनी वासना-पूर्ति के लिये उसने वह वाञ्छनीय गौरव खो दिया।

४—अमायिकता—नारी का छल-रहित भोला व्यवहार।

५—प्राकृत—साधारण (अकबर-सरीखा)

७—अकबर की काम-वासना ने उसके देवत्व को पराजित कर दिया; अतएव देवता के शाश्वत शत्रु दानव का हँसना स्वाभाविक ही है।

८—जागरण-क्रांत —दिन ढलता जा रहा था।

१०—कहा जाता है कि तारो का टूटना राजाओं की मृत्यु का सूचक है।

३३—मीनाबाजार में अनेक राजपूत सुन्दरियाँ आभूषण लेकर विचरण करती थीं। मुग्ध अकबर उनके आभूषण कई गुना मूल्य पर ले लेता था और उन सुन्दरियों को अपनी काम-क्रीडा का आलम्बन बनाता था।

३५-३६—उन सुन्दरियो की रचना के समय विधाता ने सोचा—संसार की अन्य सुन्दरियो के समान ही इनकी भी रचना करना व्यर्थ है। उत्कृष्टतर रचना के साधन न होने के कारण लज्जावश विधाता कमल-पत्र में जा छिपे। उनकी प्रजा—सृष्टि के उपमानो ने अपने पति (प्रजा-पति) को दुखी देख अपनी सारी सौंदर्य-सम्पत्ति विधाता की सेवा में

समर्पित कर दी। उस समवेत सुन्दरता से विधि ने इन सुन्दरियों क सृजन किया।

५१—किरण समझती थी कि अकबर बाजार में ही उसके समीप आएगा और वह उसको भरे बाजार में अपमानित करेगी, परन्तु अपनी सम्भावना के विरुद्ध वह एक गुप्त कमरे में बन्द हो गई।

६४—मनु ने श्रद्धा के प्रति अन्याय करते हुए इड़ा के साथ बलात्कार किया। क्रुद्ध देवताओं ने उन्हें उचित दण्ड दिया।

६५—मनु विवस्वान (सूर्य) के पुत्र कहे जाते है। अपने पुत्र के नैतिक पतन की सुधि करके आज भी सूर्य शोक के कारण जल रहा है।

६७—हेम-कुरंग—सोने का मृग (मारीच), सुरंग—विध्वंसक पदार्थो का जाल जो पानी के भीतर बिछा दिया जाता हे और अपने समीप आनेवाले जहाजों आदि को नष्ट कर देता है।

६८-६९—सीता की वेदना ने रावण का सर्वनाश कर दिया।

७०—नर ने—राम ने। देवी को—सीता को।

७१—राम के वियोग से दुखी सीता धरती में समा गई थीं।

७५—पाप पुण्य की कसौटी है, परन्तु दुर्योधन ने द्रौपदी के प्रति जो पाप किया, वह पाण्डवों के पुण्य का नहीं, उनकी नपुंसकता का द्योतक है।

७९-८०—वे हिन्दू ललनायें अपनी लाज बचाने के लिये न तो आग में जल सकीं, न हिम में गल सकीं और न पानी में ही डूब सकीं; क्योंकि उनकी पीड़ा से प्रभावित आग को पाला मार गया, हिम स्वयं पिघल गया और जलधि भाप बनकर वायुमण्डल में विलीन हो गया।

८४-८७—नारी के वेष में अकबर ने गुप्त द्वार से प्रवेश किया।

९४—जब वह झपटी तो उसकी वेणी झटके के साथ ललाट पर जा पहुँची, मानो सर्पों का सेनापति अपनी मणि (मस्तक पर लगी सिन्दूर की बिन्दी) की रक्षा के लिये आक्रमणकारी पर टूट रहा हो।

१०४-११२—यौवन के नशे में कामुकता के पुतले कल्पना के संसार में ही विचरण करते है। उन्हे चारों ओर मधुशाला, मधुबाला, मधुकलश और मधु-प्याले ही दिखाई देते हैं। विलास की यह क्षणिक रात्रि बीत जाती है। आँख खुलने पर विलास के सभी साधन अदृश्य हो जाते है, केवल यम की फाँसी ही दिखाई पड़ती है। वृद्धावस्था में वे इन्द्रियो के मल-प्रवाह में सडकर अनेक दुर्गति भोगते हैं। अन्य युवती और युवक इस जघन्य और भयावह दृश्य को देखकर भी ज्ञान-लाभ नहीं करते।

११८—उसकी भ्रूभंगिमा पर लोग जीवन-मरण का अनुभव करते है।

१२३-२४—अकबर की उक्ति।

१२७—नर का हृदय ध्वनि-क्षेपक यन्त्र है—वह यन्त्र जो शब्दो तथा चित्रो को विना तार के ही अन्य स्थानो के लिये भेजता है। नारी का हृदय 'संजय-दृष्टि' है—वह यन्त्र जो उन भेजे हुये शब्दों तथा चित्रो को ग्रहण करता है। तात्पर्य यह है कि पुरुष के हृदय से उठी हुई प्रेम-पुकार का नारी उचित उत्तर देती है। कभी-कभी हम ऐसा भी देखते है कि पुरुष के प्रेम-पागल होने पर भी नारी उसका स्वागत नहीं करती। इसमे नारी का कोई अपराध नहीं। वह तो अपने को पुरुष मे लय कर देनेवाली है। इसके लिये दोषी है सामाजिक वातावरण। जिस प्रकार 'ध्वनि-क्षेपक यन्त्र' और 'संजय-दृष्टि' मे कोई भी खराबी न होते हुए भी वातावरण की प्रभंजन-तरंगें ध्वनि को विकृत कर देती हैं और कतिपय शब्द तो सुनाई ही नही देते, उसी प्रकार नर की सच्ची पुकार कभी-कभी असामयिक नारी के अन्तरतम तक नहीं पहुँचती और यदि पहुँचती भी है तो वातावरण के कारण विकृत होकर।

१२६—दोनो की—अपनी और नर की। रौरव-नन्दन—दुख-सुख।

१३०—मानव मै देवत्व और दानत्व का सम्मिश्रण है। जब उसमें

देवता प्रबल होता है तो वह पुण्य और जब दानव प्रबल होता है तब पाप करता है।

१३३—मञ्च पर खडे होकर दर्शन-शास्त्र की व्याख्या करना और बात है और कार्य रूप से परिणत करना और।

१३४—एक बार अकबर ने किरण को देखा था और उसकी अनुपम सुन्दरता पर मुग्ध हो गया था। वह अपने मन मे समझ रहा था कि किरण कुटनियो के बहकाने से ही मीनाबाजार मे आई है; परन्तु किरण नो स्वेच्छा से प्रतिकार करने के लिये गई थी।

१३४-१३६—ऐसे आलम्बन और उद्दीपन की उपस्थिति मे अकबर जैसे कामी का मुग्ध हो जाना सर्वथा स्वाभाविक था।

१४५-४६—विष्णु लक्ष्मी पर (समुद्र-मन्थन के समय), ऋषि विश्वामित्र मेनका पर, और नारद मुनि मोहिनीबाला पर, बुरी तरह मोहित हुए थे।

१४७—तत्काल उत्तर देने का सामर्थ्य।

१५१-५६—शेरशाह तथा अन्य अफगानो का दमन करने के लिये हुमायूँ बिहार की ओर चला। पराजित शेरखां ने अधीनता स्वीकार तो कर ली, परन्तु गुप्तरूप से युद्ध की तैयारी मे जुटा रहा। इसी समय गुजरात के बादशाह बहादुर शाह ने चित्तौड पर चढ़ाई करने की तैयारी की। रानी कर्मवती ने हुमायूँ को भाई मानकर उसके पास राखी भेजी और बहादुर शाह के विरुद्ध मेवाड की सहायता के लिये निवेदन किया। हुमायूँ ने बहन के स्नेह का उचित सम्मान किया। उसके सेनानायको का कथन था कि अफगानो का सर्वनाश करके ही पश्चिम की ओर बढा जाय, परन्तु हुमायूँ ने उनकी एक न सुनी। उसे तो बहन कर्मवती की राखी की लाज रखनी थी। यह घटना भी आगे चलकर हुमायूँ की पराजय का एक कारण हुई।

१६०—सुधि-डोर—उस हुमायूँ का स्मरण कर आँसू बहने लगते है।

१६१—बाबर ने एक दीप जलाया था—वह था हुमायूँ। उस प्रदीप से कालिमा उत्पन्न हुई—अकबर के रूप में।

१६३-६५—अकबर के शैशव का वर्णन।

१६६—बचपन में अकबर बैरमखाँ आदि मे विशेष श्रद्धा रखता था; परन्तु हाथो में शक्ति आने पर उसने बुद्धि-प्रयोग किया और शासन-सूत्र अपने हाथ में ले लिया। प्रत्येक मनुष्य बचपन में बड़ों के प्रति श्रद्धा रखता है; परन्तु यौवन के साथ ही बुद्धि और तर्क के कारण वह श्रद्धेय जनों की भी अवहेलना और मनमानी करने लगता है। यह स्वभाव मानव को उसके आदि पिता मनु से पैतृक सम्पत्ति के रूप मे मिला है। मनु के मन में भी पहले श्रद्धा (कामायनी) थी; और आगे चलकर बुद्धि (इड़ा) के प्रति विकार उत्पन्न हुआ।

१६९—कुछ—भगवानदास आदि।

१७२—जिह्मप्रकृति—कुटिल स्वभाव वाली।

१७८—राणा की आँखो मे आँसू की बूँदें थीं, मानो उनका हृदय पिघल कर नयनो के कोनों में जम गया हो। जमने का कारण थी शीतलता, और शीतलता का कारण थी वेदना की सीमा, जिसपर पहुँचकर प्राणी मूर्छा अथवा मृत्यु की गोद में शयन करता है।

१८३-८७—चमकती हुई पैनी कटार पर उत्प्रेक्षा।

१९४—वर्जनकारी नत—बलात्कार को रोकने मे असमर्थ।

१९५—सरसिज-सीपी—उनके नेत्र कमल और सीपी के समान थे जिनसे गरम आँसू की धारा बह रही थी।

२०३—व्यथा—वासना की बाढ़ उतर जाने पर मनुष्य में एक व्यथा—ग्लानि अवशिष्ट रह जाती है, जिसे वह सर्वसाधारण पर प्रकट नही कर सकता। इस ग्लानि में माधुर्य और सुख का भी सम्मिश्रण रहता है क्योंकि अतीत के अनुभवो के कारण उस प्रकार के पतन की आशंका नहीं रह जाती।

२०६—किरणवाला की उक्ति। स्वप्नावस्था में भयभीत भागने का प्रयास करता है; पर गिर-गिर पडता है।

२०७—अकबर की उक्ति।

२११—आकाश-तरंग—शब्द, प्रकाश आदि शक्तियों को वहन करनेवाला माध्यम, जो आकाश में सर्वत्र व्याप्त है और जिसकी गति लगभग साढे चार लाख योजन प्रति घंटा है।

२१५—तपस्या पूरी होने पर गिरिजा को, रावण और कौरवों का नाश होने पर सीता और द्रौपदी को, अपने पति की पुनः प्राप्ति हुई थी। उसी प्रकार किरण की भी साधना पूरी हुई। अकबर का पतन हुआ; और वह अपने पति के समीप पहुँच गई।

२१७—अकबर पहले हलाहल, दावाग्नि और वाडवाग्नि की भाँति विनाशकारी था, परन्तु अब अपना प्रारम्भिक अवगुण त्याग कर अमृत बरसानेवाला तथा वन और समुद्र को सरस बनाने वाला हो गया।

२२४—गौरवशाली—(गुरु-भारी) बोझ-युक्त (नारी-सेवा के भार के कारण), (गुरु-महान) महिमा-मय—नारी सेवा के प्रशस्त पथ पर आ जाने के कारण।

—शिवनायक सिंह